CHAPTER दो
कलियुग के लक्षण

इस अध्याय में यह बतलाया गया है कि जब कलियुग के दुर्गुण असह्य हद तक बढ़ जायेंगे तो भगवान् कल्कि के रूप में अधर्म में रत लोगों का विनाश करने के लिए अवतरित होंगे। तब फिर नया सत्ययुग प्रारम्भ होगा।

कलियुग की प्रगति के साथ साथ लोगों में सद्गुणों का ह्रास होता है और अशुद्ध गुणों की वृद्धि होती है। तथाकथित नास्तिक धर्म वैदिक आचार संहिता को हटाकर प्रधान बन जाता है। राजा बटमार बन जाते हैं और प्रजा निम्न वृत्तियाँ अपना लेती है। सारे सामाजिक वर्ण शूद्र जैसे हो जाते हैं। सारी गौवें बकरियाँ जैसी हो जाती हैं। सारी आध्यात्मिक कुटिया भौतिकतावादी घरों जैसी हो जाती हैं और पारिवारिक सम्बन्ध निकट-विवाह-सम्बन्ध तक सीमित हो जाते हैं।

जब कलियुग समाप्त प्राय होगा तो भगवान् अवतरित होंगे। वे विष्णुयशा नामक उच्च ब्राह्मण के घर में शम्भल नामक ग्राम में प्रकट होंगे और कल्कि नाम से विख्यात होंगे। वे अपने घोड़े देवदत्त पर सवार होंगे और अपने हाथ में तलवार लेकर पृथ्वी पर विचरण करते हुए राजाओं के वेश में रहने वाले लाखों डाकुओं का वध करेंगे। तब अगले सत्ययुग के लक्षण प्रकट होने लगेंगे। जब चन्द्र, सूर्य तथा बृहस्पति एक ही राशि पर होंगे और पुष्या नक्षत्र से जा मिलेंगे तो सत्ययुग प्रारम्भ होगा। इस ब्रह्माण्ड में जीवों के समाज में चार युगों का अर्थात् सत्य, त्रेता, द्वापर तथा कलि का इस क्रम से चक्र चलता है।

इस अध्याय का समापन अगले सत्ययुग में वैवस्वत मनु से प्रारम्भ होने वाले भावी चन्द्र तथा सूर्य वंशों के संक्षिप्त वर्णन के साथ होता है। अब भी दो सन्त स्वभाव वाले क्षत्रिय रह रहे हैं, जो इस कलियुग की समाप्ति पर सूर्य देव विवस्वान तथा चन्द्र देव के पवित्र वंशों को फिर से चालू करेंगे। इन राजाओं में से एक देवापि है, जो महाराज शान्तनु का भाई है और दूसरा मरु है, जो इक्ष्वाकु का वंशज है। वे कलाप नामक ग्राम में अज्ञात रह कर अपना समय काट रहे हैं।

श्रीशुक उवाच

ततश्चानुदिनं धर्मः सत्यं शौचं क्षमा दया ।
कालेन बलिना राजन्नङ्क्ष्यत्यायुर्बलं स्मृतिः ॥ १ ॥

शब्दार्थ

श्री-शुकः उवाच—शुकदेव गोस्वामी ने कहा; ततः—तब; च—तथा; अनुदिनम्—दिन प्रतिदिन; धर्मः—धर्म; सत्यम्—सत्य; शौचम्—शुद्धता; क्षमा—सहनशक्ति; दया—दया; कालेन—काल की शक्ति से; बलिना—प्रबल; राजन्—हे राजा परीक्षित; नङ्क्ष्यति—नष्ट हो जायेगी; आयुः—उम्र; बलम्—बल; स्मृतिः—स्मरणशक्ति।

शुकदेव गोस्वामी ने कहा : हे राजा, तब कलियुग के प्रबल प्रभाव से धर्म, सत्य, पवित्रता, क्षमा, दया, आयु, शारीरिक बल तथा स्मरणशक्ति दिन प्रतिदिन घटते जायेंगे।

तात्पर्य : जैसाकि इस श्लोक में वर्णन हुआ है, वर्तमान युग, कलियुग, में प्रायः सारे वांछित गुणों का क्रमशः ह्रास होगा। उदाहरणार्थ, उच्चतर सत्ता के प्रति सम्मान के सूचक धर्म का जो

धार्मिक सिद्धान्तों का पालन करने के लिए प्रेरित करता है, ह्रास होगा।

पाश्चात्य जगत में धर्माधिकारी लोग ईश्वर के नियमों को, या स्वयं ईश्वर को, लोगों के समक्ष वैज्ञानिक रीति से प्रस्तुत करने में असमर्थ रहे हैं, फलस्वरूप पाश्चात्य बौद्धिक इतिहास में धर्मशास्त्र तथा विज्ञान के मध्य एक कठोर द्वन्द्व उठ खड़ा हुआ है। इस झगड़े से निपटने के उद्देश्य से कुछ धर्माचार्य अपने सिद्धान्तों को संशोधित करने के लिए तैयार हो गये हैं जिससे वे न केवल वैज्ञानिक तथ्यों के अनुरूप बने अपितु उन छद्म वैज्ञानिक चिन्तनों तथा धारणाओं के भी अनुरूप हो, जो सिद्ध न होने पर भी विज्ञान के क्षेत्र में कपट से सम्मिलित हो गये हैं। दूसरी ओर वे उन्मादी धर्माचार्य हैं, जिन्हें वैज्ञानिक विधि बिल्कुल मान्य नहीं है और वे अपने पुरातन साम्प्रदायिक अन्धविश्वासों की सत्यता की दुहाई देते हैं।

इस तरह क्रमबद्ध वैदिक धर्मशास्त्र से विहीन, भौतिक विज्ञान स्थूल भौतिकतावाद के विध्वंसक क्षेत्र में चला गया है, जबकि चिन्तनपरक पाश्चात्य दर्शन सापेक्ष नीतिशास्त्र एवं अनिश्चित भाषा-वैज्ञानिक विश्लेषण की ओर बहक गया है। यद्यपि भौतिकतावादी विश्लेषण के प्रति पश्चिम के अनेक सर्वश्रेष्ठ विद्वान समर्पित हैं किन्तु बौद्धिक धारा से कटा हुआ अधिकांश पश्चिम का धार्मिक जीवन असमान उन्मादवाद तथा अवैध योगिक एवं गुह्य सम्प्रदायों से छाया हुआ है। लोग ईश-विज्ञान से इस हद तक अनजान हैं कि वे कभी कभी कृष्णभावनामृत आन्दोलन को धर्म-विज्ञान तथा धर्म के कल्पनाशील प्रयासों के इस विषम घालमेल के साथ नत्थी कर देते हैं। इस तरह, सच्चा धर्म जो भगवद्विधि का कठोर चेतन आज्ञा-पालन है, पतन की ओर अग्रसर हो रहा है।

सत्यम् का भी ह्रास हो रहा है क्योंकि लोग यह नहीं जानते कि सत्य है क्या। परब्रह्म को जाने बिना केवल काल्पनिक आपेक्षिक सत्यों का ढेर लगा देने से जीवन के असली महत्त्व या उद्देश्य को स्पष्टया नहीं समझा जा सकता।

क्षमा का भी ह्रास हो रहा है क्योंकि ऐसी कोई व्यावहारिक विधि नहीं जिसके द्वारा लोग अपने को शुद्ध बना सकें और इस तरह ईर्ष्या-द्वेष से मुक्त हो सकें। जब तक मनुष्य आध्यात्मिक सुधार के किसी प्रामाणिक कार्यक्रम के अन्तर्गत भगवन्नाम कीर्तन करके शुद्ध नहीं हो लेता, तब तक उसका मन क्रोध, ईर्ष्या तथा क्षुद्रता से भरा रहेगा। इस तरह *दया* का भी ह्रास हो रहा है। सारे जीव ईश्वर के दैवी अस्तित्व में सहभागी होने के कारण शाश्वत रूप से जुड़े हुए हैं। जब नास्तिकता तथा संशयवाद द्वारा ऐसी एकता प्रच्छन्न हो जाती है, तो लोग एक-दूसरे पर दया नहीं दिखाते; वे अन्य जीवों के कल्याण-कार्य को सम्वर्धित करने में अपना स्वार्थ नहीं पहचान पाते। वस्तुत: लोग अपने प्रति भी दयालु नहीं रह जाते। वे मदिरा, नशीली दवाओं, तम्बाकू, मांसाहार, यौन-असंयम तथा जो भी इन्द्रियतृप्ति के सस्ते साधन उपलब्ध हो सकें उनके द्वारा अपने को क्रमबद्ध रूप में विनष्ट करते रहते हैं।

क्योंकि इन सारी आत्मविनाशी आदतों तथा काल के प्रबल प्रभाव से औसत आयु घट रही

है। आधुनिक विज्ञानी जनता का विश्वास जीतने के लिए प्राय: आँकडे प्रकाशित करते रहते हैं, जो यह दिखाते प्रतीत होते हैं कि विज्ञान ने औसत आयु बढ़ा दी है। किन्तु ये आँकडे गर्भपात की क्रूर प्रक्रिया द्वारा मारे जाने वाले लोगों की संख्या का कोई लेखाजोखा नहीं बताते। जब हम गर्भपात द्वारा मारे गये बच्चों की संख्या को कुल जनसंख्या की जीवन-संभावना में सम्मिलित कर लेते हैं, तो हम देखते हैं कि कलियुग में औसत आयु बढ़ी नहीं, अपितु बड़े स्तर पर घट रही है।*

बलम् अर्थात् शारीरिक बल भी घट रहा है। वैदिक साहित्य बतलाता है कि ५,००० वर्ष पूर्व के युग में मनुष्य तो मनुष्य, पशु तथा पौधे भी लम्बे और अधिक बलवान होते थे। कलियुग के अग्रसर होने के साथ शारीरिक आकार-प्रकार तथा बल में क्रमिक ह्रास आयेगा।

स्मृति तो निश्चित रूप से क्षीण हो रही है। पूर्ववर्ती युगों में मनुष्यों की स्मृति अच्छी थी। और उन्हें आज के जैसे उग्र नौकरशाही एवं तकनीकी समाज से पाला नहीं पड़ता था। इस तरह बिना लिखे ही आवश्यक सूचना तथा विद्या सुरक्षित थी। निस्संदेह, कलियुग में सारी बातों में नाटकीय परिवर्तन आया है।

*१९८४ वर्ष के लिए अमेरिका के आँकड़ों के संक्षेपण के अनुसार, अमेरिका में १९८२ में लगभग ३७ लाख जीवित बच्चों का जन्म हुआ और जन्म के समय की औसत जीवन-संभावना ७४ वर्ष ६ मास थी। किन्तु जब जीवित-जन्म-संख्या में १५ लाख गर्भपात जोड़ दिए गए, तब गर्भित शिशुओं की औसत जीवन-संभावना गिर कर ५३ वर्ष रह गई।

वित्तमेव कलौ नृणां जन्माचारगुणोदय: ।
धर्मन्यायव्यवस्थायां कारणं बलमेव हि ॥ २॥

शब्दार्थ

वित्तम्—धन; एव—केवल; कलौ—कलियुग में; नृणाम्—आदमियों में; जन्म—उत्तम जन्म का; आचार—अच्छा व्यवहार; गुण—तथा सद्गुण; उदय:—प्रकट होने का कारण; धर्म—धार्मिक कर्तव्य; न्याय—तथा तर्क की; व्यवस्थायाम्—व्यवस्था में; कारणम्—कारण; बलम्—बल; एव—एकमात्र; हि—निस्सन्देह।

कलियुग में एकमात्र सम्पत्ति को ही मनुष्य के उत्तम जन्म, उचित व्यवहार तथा सद्गुणों का लक्षण माना जायेगा। कानून तथा न्याय तो मनुष्य के बल के अनुसार ही लागू होंगे।

तात्पर्य : कलियुग में मनुष्य अपनी आर्थिक स्थिति के ही अनुसार उच्च, मध्यम या निम्न श्रेणी का माना जाता है, फिर उसका ज्ञान, संस्कृति तथा आचरण चाहे जैसे हों। इस युग में समृद्ध पड़ोस वाले अनेक औद्योगिक तथा व्यापारिक नगर धनियों के लिए सुरक्षित हैं। राजसी दिखने वालेघरों के भीतर सुन्दर वृक्षों की पंक्तिबद्ध सड़कों पर अनेक दुराचारी पापमय कृत्यों का होना कोई असामान्य बात नहीं होती। वैदिक कसौटी के अनुसार केवल वह व्यक्ति उच्च श्रेणी का माना जाता है यदि उसका आचरण प्रबुद्ध है और उसका आचरण प्रबुद्ध तब माना जाता है यदि उसके कार्यकलाप सारे प्राणियों के सुख का सम्वर्धन करने वाले हों। प्रत्येक जीव मूलत: सुखी है क्योंकि सारे जीवों में एक नित्य आध्यात्मिक स्फुलिंग रहता है, जो ईश्वर के दैवी सचेतन स्वभाव का भाग

होता है। जब हमारी मूल आध्यात्मिक जागरूकता जागृत हो उठती है, तो हम सहज ही आनन्द तथा ज्ञान और शान्ति में तुष्ट हो जाते हैं। एक प्रबुद्ध या शिक्षित मनुष्य को अपना आध्यात्मिक ज्ञान जागृत करने का प्रयास करना चाहिए और अन्यों को भी उस दिव्य चेतना का अनुभव कराने में सहायक बनना चाहिए।

महान् पाश्चात्य दार्शनिक शूकरात ने कहा था कि यदि मनुष्य को प्रबुद्ध बना दिया जाय तो वह स्वत: उत्तम कर्म करेगा और श्रील प्रभुपाद इस तथ्य की पुष्टि करते थे। किन्तु कलियुग में इस स्पष्ट सत्य की उपेक्षा की जाती है। और ज्ञान तथा सद्गुण की खोज का स्थान धन के लिए दूषित पाशविक स्पर्धा ने ले लिया है। जो लोग इसमें सफल होते हैं, वे आधुनिक समाज के उच्च लोग बन जाते हैं और उनकी उपभोग शक्ति उन्हें सर्वाधिक आदरणीय, राजसी तथा शिक्षित पद दिलाती है।

यह श्लोक यह भी बतलाता है कि कलियुग में केवल बल (*बलम् एव*) ही कानून तथा न्याय का निर्धारण करेगा। हमें यह स्मरण रखना होगा कि प्रगतिशील वैदिक संस्कृति में आध्यात्मिक तथा सर्वसाधारण जगतों में कोई कृत्रिम द्वन्द्व नहीं रहता था। सारे सभ्य लोग इसे मानकर चलते थे कि ईश्वर सर्वत्र है और उनके नियम सभी प्राणियों पर लागू होते हैं। इसलिए *धर्म* शब्द मनुष्य की सामाजिक या सार्वजनिक बाध्यता के साथ ही धार्मिक कर्तव्य का भी सूचक है। इस तरह अपने परिवार का कर्तव्य समझ कर ध्यान रखना भी धर्म है और भगवान् की प्रेमाभक्ति में संलग्न होना भी धर्म है। किन्तु यह श्लोक इंगित करता है कि कलियुग में ''जिसकी लाठी उसकी भैस'' वाली कहावत चरितार्थ होती रहेगी।

इस स्कन्ध के प्रथम अध्याय में हमने देखा कि यह सिद्धान्त किस तरह भारत के भूतकाल तक घुस चुका था। इसी तरह जब पाश्चात्य जगत को ऐशियाई देशों के ऊपर राजनीतिक, आर्थिक तथा टेक्नालाजिकल नेतृत्व प्राप्त हुआ तो यह बेहूदा प्रचार किया गया कि भारतीय बल्कि सामान्यतया सभी गैर-पाश्चात्य, धर्म, धर्म-विज्ञान और दर्शन आदिम अवस्था में हैं और अवैज्ञानिक हैं—मात्र कपोल कल्पना और अंधविश्वास हैं। सौभाग्यवश अब यह उद्धत तथा तर्कशून्य दृष्टिकोण समाप्त हो रहा है और सारे विश्व के लोग भारत के संस्कृत साहित्य में उपलब्ध आध्यात्मिक दर्शन तथा विज्ञान की लड़खड़ाती सम्पत्ति की प्रशंसा करने लगे हैं। दूसरे शब्दों में, अनेक बुद्धिमान लोग परम्परागत पाश्चात्य धर्म को प्रामाणिक इसीलिए नहीं मानते क्योंकि पश्चिम ने राजनीतिक तथा आर्थिक दृष्टि से मानवता के अन्य भौगोलिक तथा धार्मिक रूपों को दमित किया है। इस तरह अब आशा बँधी है कि आध्यात्मिक मामलों को हथियारों की परीक्षा से नहीं, दार्शनिक स्तर पर वाद-विवाद से हल किया जा सकता है।

इसके अतिरिक्त यह श्लोक यह भी इंगित करता है कि कानून का नियम सबल तथा निर्बल पर समान रूप से लागू नहीं होगा। अनेक राष्ट्रों में से न्याय उन्हीं को मिल पा रहा है, जो खर्च कर सकते हैं और इसके लिए लड़ाई लड़ सकते हैं। सभ्य राज्य में हर पुरुष, स्त्री तथा बालक को

उपयुक्त कानूनी पद्धति तक समान तथा जल्द पहुँच होनी चाहिए। आधुनिक काल में हम इसे कभी कभी मानव अधिकार कह कर द्योतित करते हैं। निश्चय ही, कलियुग में मानव अधिकारों का हनन स्पष्ट दिखता है।

दाम्पत्येऽभिरुचिर्हेतुर्मायैव व्यावहारिके ।
स्त्रीत्वे पुंस्त्वे च हि रतिर्विप्रत्वे सूत्रमेव हि ॥ ३ ॥

शब्दार्थ

दाम्-पत्ये—पति-पत्नी के सम्बन्ध में; अभिरुचिः—ऊपरी आकर्षण; हेतुः—कारण; माया—धोखा; एव—निस्सन्देह; व्यावहारिके—व्यापार में; स्त्रीत्वे—स्त्री होने में; पुंस्त्वे—पुरुष होने में; च—तथा; हि—निस्सन्देह; रतिः—कामशास्त्र; विप्रत्वे—ब्राह्मण होने में; सूत्रम्—जनेऊ; एव—एकमात्र; हि—निस्सन्देह।

पुरुष तथा स्त्रियाँ केवल ऊपरी आकर्षण के कारण एकसाथ रहेंगे और व्यापार की सफलता कपट पर निर्भर करेगी। पुरुषत्व तथा स्त्रीत्व का निर्णय कामशास्त्र में उनकी निपुणता के अनुसार किया जायेगा और ब्राह्मणत्व जनेऊ पहनने पर निर्भर करेगा।

तात्पर्य : जिस तरह मानव जीवन का एक महान् तथा गम्भीर उद्देश्य है—आध्यात्मिक मोक्ष—उसी तरह विवाह तथा शिशु-पालन जैसे मूलभूत मानव संस्थानों को भी उसी महान् उद्देश्य के प्रति समर्पित होना चाहिए। दुर्भाग्यवश, वर्तमान युग में काम-वासना की तुष्टि ही विवाह का सर्वोपरि, भले ही वह एकमात्र न हो, कारण बन चुका है।

कामोत्तेजना, जो हर प्रजाति के नरों तथा मादाओं को शारीरिक रूप से संयुक्त होने के लिए प्रेरित करती है और उच्च प्रजातियों में भी भावात्मक रूप से प्रेरित करती है, अन्ततोगत्वा स्वाभाविक उत्तेजना नहीं है क्योंकि यह शरीर के साथ आत्मा की अस्वाभाविक पहचान पर आधारित है। स्वयं जीवन आध्यात्मिक प्रक्रिया है। जैव मशीन अर्थात् शरीर को जीवन देने वाला आत्मा ही है। चेतना आत्मा की व्यक्त शक्ति है अतएव चेतना मूलतः नितान्त आध्यात्मिक घटना है। जब जीवन या चेतना जैव मशीन के भीतर सीमित रहती है और भ्रमवश अपने को मशीन मान बैठती है, तो यह शरीर प्राप्त होता है और काम-वासना जागृत होती है।

ईश्वर मनुष्य जीवन को इस मायामय जगत के गुण को सुधारने और शुद्ध दैवी जगत की तृप्ति तक लौट जाने के लिए सुअवसर के रूप में देखना चाहता है। किन्तु भौतिक शरीर के साथ हमारी पहचान अत्यन्त पुरानी है और अधिकांश लोगों के लिए भौतिकता में ढले मन की माँगों से अपने को अलग कर पाना कठिन है। इसलिए वैदिक शास्त्र पवित्र विवाह की संस्तुति करते हैं जिसमें तथाकथित पुरुष और तथाकथित स्त्री धार्मिक आदेशों के अनुसार नियमित आध्यात्मिक विवाह में बँध सकें। इस प्रकार आत्म-साक्षात्कार का इच्छुक व्यक्ति, जिसने पारिवारिक जीवन का चुनाव किया है, अपनी इन्द्रियों के लिए पर्याप्त तुष्टि प्राप्त कर सकता है और उसी के साथ ही धार्मिक आदेशों का पालन करके अपने हृदय में भगवान् को भी प्रसन्न कर सकता है। तब भगवान् उसको भौतिक इच्छा से मुक्त कर देते हैं।

कलियुग में यह गहरी समझ लुप्तप्राय हो चुकी है और जैसाकि इस श्लोक में वर्णन हुआ है, स्त्री तथा पुरुष पशुओं की तरह केवल मांस, हाड़, झिल्ली, रक्त इत्यादि से बने शरीर के आकर्षण से संयुक्त होते हैं। दूसरे शब्दों में, हमारे आधुनिक ईश्वर विहीन समाज मानवता की छिछली कमजोर बुद्धि विरले ही शाश्वत आत्मा के स्थूल भौतिक आवरण को बेध पाती है। इस तरह अधिकांशतया पारिवारिक जीवन का सर्वोच्च उद्देश्य तथा महत्त्व समाप्त हो चुका है।

इस श्लोक से जो गौण बात स्थापित होती है, वह यह है कि कलियुग में वह स्त्री ''अच्छी'' मानी जाती है, जो विषयवासना की दृष्टि से आकर्षक हो और विषयवासना में निपुण हो। इसी तरह विषयवासना की दृष्टि से आकर्षक पुरुष ही ''अच्छा'' है। इस उथलेपन का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है बीसवीं सदी के लोगों द्वारा अविश्वसनीय रूप से मनोरंजन उद्योग के गवैयों तथा अभिनेताओं तथा अन्य महत्त्वपूर्ण लोगों की ओर विशेष ध्यान देना। विभिन्न शरीरों में विषयवासना के अनुभवों का पीछा करते रहना नई बोतलों में पुरानी शराब को पीने जैसा है। किन्तु कलयिुग में कुछ ही लोग इसे समझ सकते हैं।

अन्त में इस श्लोक में यह कहा गया है कि कलियुग में कोई भी मनुष्य वेश धारण करने के आधार पर पुरोहित या ब्राह्मण माना जायेगा। भारत में ब्राह्मण लोग जनेऊ पहनते हैं और विश्व के अन्य भागों में पुरोहित अन्य आभूषण तथा प्रतीक धारण करते हैं। किन्तु कलियुग में एकमात्र प्रतीक के बल पर कोई व्यक्ति धार्मिक नेता बन सकेगा भले ही ईश्वर के विषय में वह अज्ञानी हो।

लिङ्गमेवाश्रमख्यातावन्योन्यापत्तिकारणम् ।
अवृत्त्या न्यायदौर्बल्यं पाण्डित्ये चापलं वचः ॥ ४॥

शब्दार्थ

लिङ्गम्—बाह्य प्रतीक; एव—केवल; आश्रम-ख्यातौ—मनुष्य के आश्रम को जानने में; अन्योन्य—पारस्परिक; आपत्ति—विनिमय; कारणम्—कारण; अवृत्त्या—जीविका के अभाव से; न्याय—विश्वसनीयता में; दौर्बल्यम्—दुर्बलता में; पाण्डित्ये—विद्वत्ता में; चापलम्—चालाकी-भरे; वचः—शब्द।

मनुष्य का आध्यात्मिक पद मात्र बाह्य प्रतीकों से सुनिश्चित होगा और इसी आधार पर लोग एक आश्रम छोड़ कर दूसरे आश्रम को स्वीकार करेंगे। यदि किसी की जीविका उत्तम नहीं है, तो उस व्यक्ति के औचित्य में सन्देह किया जायेगा। और जो चिकनी-चुपड़ी बातें बनाने में चतुर होगा वह विद्वान पंडित माना जायेगा।

तात्पर्य : पिछले श्लोक में बतलाया गया था कि कलियुग में पुरोहित वर्ग केवल बाह्य प्रतीकों के द्वारा पहचाना जायेगा और इस श्लोक में उसी बात को समाज के अन्य वर्गों—राजनैतिक या सैन्य वर्ग, व्यापारी अथवा उत्पादक वर्ग तथा श्रमिकों या कारीगरों—पर भी लागू किया गया है।

आधुनिक समाज शास्त्रियों ने यह दिखा दिया है कि उन समाजों में जिनका संचालन मुख्यता प्रोटेस्टैन्ट नीतिशास्त्र द्वारा होता है, गरीबी को आलस्य, गंदगी, मूर्खता, अनैतिकता तथा व्यर्थता का चिह्न माना जाता है। किन्तु ईश-भावनाभावित समाज में अनेक व्यक्ति स्वेच्छा से अपना जीवन ज्ञान

तथा अध्यात्म की खोज में समर्पित करते हैं, भौतिक उपलब्धि के लिए नहीं। इस तरह सरल तथा तपस्यामय जीवन के लिए वरीयता, बुद्धि, आत्मसंयम तथा जीवन के उच्च आदर्श के प्रति संवेदनशीलता को सूचित कर सकती है। निस्सन्देह, गरीबी (निर्धनता) से इन गुणों की स्थापना अपने आप नहीं होती किन्तु कभी कभी उनका परिणाम हो सकती है। किन्तु कलियुग में प्राय: इस सम्भावना को भुला दिया जाता है।

बौद्धिकता इस मोहने वाले कलियुग की अन्य दुर्घटना है। आधुनिक तथाकथित दार्शनिकों तथा विज्ञानियों ने विद्या के हर क्षेत्र में ऐसी पारिभाषिक शब्दावली बना ली है कि जब वे भाषण देते हैं, तो लोग उन्हें इसलिए विद्वान समझते हैं क्योंकि वे जो बोलते हैं उसे अन्य कोई नहीं समझ सकता। पाश्चात्य संस्कृति में ग्रीक अध्यापक सर्वप्रथम लोग थे, जो बुद्धिमत्ता तथा शुद्धि से भी ऊपर अलंकार तथा दक्षता पर वाद-विवाद करते थे। बीसवीं सदी में तो धोखाधड़ी पल्लवित हो ही रही है। आधुनिक विश्वविद्यालयों में नाममात्र की बुद्धिमत्ता है यद्यपि टेक्निकल आँकडे अनन्त हैं। यद्यपि अनेक आधुनिक चिन्तक उच्चतर आध्यात्मिक सत्य से अनजान होते हैं, किन्तु वे बहुत अच्छे ''वक्ता'' होते हैं और अधिकांश लोग उनके अज्ञान को भाँप नहीं पाते।

अनाढ्यतैवासाधुत्वे साधुत्वे दम्भ एव तु ।
स्वीकार एव चोद्वाहे स्नानमेव प्रसाधनम् ॥ ५ ॥

शब्दार्थ

अनाढ्यता—गरीबी, निर्धनता; एव—केवल; असाधुत्वे—असाधु होने में; साधुत्वे—सफलता में; दम्भ:—दिखावा; एव—केवल; तु—तथा; स्वी-कार:—शाब्दिक स्वीकृति; एव—केवल; च—तथा; उद्वाहे—विवाह में; स्नानम्—जल से स्नान करने; एव—केवल; प्रसाधनम्—शरीर को स्वच्छ रखना तथा अलंकृत करना।

यदि किसी व्यक्ति के पास धन नहीं है, तो वह अपवित्र माना जायेगा और दिखावे को गुण मान लिया जायेगा। विवाह मौखिक स्वीकृति के द्वारा व्यवस्थित होगा और कोई भी व्यक्ति अपने को जनता के बीच आने के लिए योग्य समझेगा यदि उसने केवल स्नान कर लिया हो।

तात्पर्य : *दम्भ* शब्द आत्म-प्रवंचक का—ऐसे व्यक्ति का सूचक है, जो सन्त स्वभाव वाला नहीं बनना चाहता अपितु ऊपर से सन्त प्रतीत होना चाहता है। कलियुग में ऐसे धार्मिक दम्भियों की संख्या बहुत बड़ी है, जो यह दावा करते हैं कि एकमात्र उन्हें ही रास्ता मालूम है, एकमात्र उन्हें ही सत्य का पता है और एकमात्र उन्हें ही प्रकाश प्राप्त है। अनेक मुस्लिम देशों में इस मनोवृत्ति के कारण धार्मिक स्वतंत्रता का निर्ममता से दमन हुआ है, जिससे प्रबुद्ध आध्यात्मिक ज्ञान का सुअवसर विनष्ट हो गया है। सौभाग्यवश अधिकांश पाश्चात्य जगत में स्वतंत्र धार्मिक अभिव्यक्ति की प्रणाली है। किन्तु पश्चिम में भी दम्भी लोग दूसरे धर्मों के निष्ठावान तथा सन्त स्वभाव वाले अनुयायियों को म्लेच्छ और दानव मानते हैं।

सामान्यतया पाश्चात्य धार्मिक उन्मादी अनेक बुरी आदतों में यथा घूम्रपान, सुरापान, यौन, द्यूत-

क्रीड़ा तथा पशु-हत्या से ग्रस्त रहते हैं। यद्यपि कृष्णभावनामृत आन्दोलन के अनुयायी अवैध यौन, नशा, जुआ खेलना तथा पशु-हत्या का बहिष्कार करते हैं और यद्यपि वे अपना जीवन ईश्वर के निरन्तर महिमागान में समर्पित कर देते हैं किन्तु दम्भी लोग यह दावा करते हैं कि ऐसी कठोर तपस्या तथा ईश्वर-भक्ति ''शैतान की चालें'' हैं। इस तरह पापी लोग धार्मिक बन जाते हैं और सन्तों को आसुरी करार दिया जाता है। आध्यात्मिकता की प्रारम्भिक अनिवार्यताओं को भी समझ पाने की यह दयनीय असमर्थता कलियुग का प्रधान लक्षण है।

इस युग में विवाह-प्रथा का अवमूल्यन होगा। निश्चय ही, विवाह प्रमाण-पत्र को कभी कभी रूखेपन से ''कागज का टुकड़ा'' कह कर ठुकरा दिया जाता है। विवाह के आध्यात्मिक प्रयोजन को भुलाते हुए तथा यौन को गृहस्थ जीवन का हुए, कामी पुरुष तथा स्त्रियाँ कानूनी सम्बन्ध के उत्तरदायित्व और कष्टप्रद औपचारिकताओं के बिना ही धड़ल्ले से यौन-व्यापार में रत होते हैं। ऐसे मूर्ख लोग तर्क प्रस्तुत करते हैं कि, ''यौन स्वाभाविक है''। किन्तु यदि यौन स्वाभाविक है, तो गर्भावस्था तथा शिशु-जन्म भी उतने ही स्वाभाविक हैं। और शिशु के लिए यह स्वाभाविक है कि वह पिता तथा माता द्वारा स्नेहपूर्वक पाला जाय और जीवन-भर वही उसके माता-पिता रहें। मनोवैज्ञानिक अध्ययन इसकी पुष्टि करते हैं कि शिशु की देखरेख माता तथा पिता दोनों करें, अत: यह स्पष्ट है कि यौनाचार के साथ स्थायी विवाह व्यवस्था का होना स्वाभाविक है। दम्भी लोग अनियंत्रित यौन की सम्पुष्टि यह कह कर करते हैं कि यह ''स्वाभाविक है'' किन्तु यौन के स्वाभाविक परिणाम—गर्भधारण—से बचने के लिए, वे गर्भनिरोधकों का इस्तेमाल करते हैं, जो वृक्षों पर नहीं लगते। निस्सन्देह, गर्भनिरोध बिल्कुल स्वाभाविक नहीं। इस तरह दिखावे तथा मूर्खता का कलियुग में प्राधान्य है।

इस श्लोक का अन्त इस कथन से होता है कि वर्तमान युग में लोग अपने शरीरों को समुचित रीति से अलंकृत नहीं करेंगे। मनुष्य को चाहिए कि विविध धार्मिक आभूषणों से अपने शरीर को अलंकृत करे। वैष्णवजन अपने शरीर में *तिलक* अंकित करते हैं, जो भगवान् के पावन नाम से अभिमंत्रित होता है। किन्तु कलियुग में धार्मिक तथा भौतिक औपचारिकताओं तक का बिना समझे-बूझे बहिष्कार किया जाता है।

दूरे वार्ययनं तीर्थं लावण्यं केशधारणम् ।
उदरंभरता स्वार्थ: सत्यत्वे धार्ष्ट्यमेव हि ।
दाक्ष्यं कुटुम्बभरणं यशोऽर्थे धर्मसेवनम् ॥ ६ ॥

शब्दार्थ

दूरे—दूर स्थित; वारि—जल का; अयनम्—आगार; तीर्थम्—तीर्थस्थान; लावण्यम्—सौन्दर्य; केश—बाल; धारणम्—धारण करना; उदरम्-भरता—पेट का भरण; स्व-अर्थ:—जीवन-लक्ष्य; सत्यत्वे—तथाकथित सत्य में; धार्ष्ट्यम्—ढिठाई; एव—केवल; हि—निस्सन्देह; दाक्ष्यम्—दक्षता; कुटुम्ब-भरणम्—परिवार का पालन-पोषण; यश:—कीर्ति के; अर्थे—हेतु; धर्म-सेवनम्—धार्मिक नियमों का पालन।

तीर्थस्थान को दूरस्थ जलाशय और सौन्दर्य को मनुष्य की केश-सज्जा पर आश्रित, माना जायेगा। उदर-भरण जीवन का लक्ष्य बन जायेगा और जो जितना ढीठ होगा उसे उतना ही सत्यवादी मान लिया जायेगा। जो व्यक्ति परिवार का पालन-पोषण कर सकता है, वह दक्ष समझा जायेगा। धर्म का अनुसरण मात्र यश के लिए किया जायेगा।

तात्पर्य : भारत में अनेक तीर्थस्थान हैं जहाँ पवित्र नदियाँ बहती हैं। मूर्ख लोग इन नदियों में स्नान करके अपने पापों से मुक्ति की खोज करते हैं किन्तु वे इन स्थानों में निवास करने वाले विद्वान भगवद्भक्तों से उपदेश ग्रहण नहीं करते। मनुष्य को केवल अनुष्ठानिक स्नान करने नहीं अपितु आध्यात्मिक प्रकाश पाने के लिए तीर्थस्थान में जाना चाहिए।

इस युग में लोग विभिन्न शैलियों से अपने केश को व्यवस्थित करते नहीं थकते और इस तरह मुखमण्डल के सौन्दर्य और कामुकता को बढ़ाना चाहते हैं। वे यह नहीं जानते कि वास्तविक सौन्दर्य तो हृदय के भीतर से, आत्मा से आता है और केवल वही व्यक्ति सही अर्थ में आकर्षक है, जो शुद्ध है। ज्यों-ज्यों इस युग में कठिनाइयाँ बढ़ती जायेंगी, उदर-भरण को सफलता का चिह्न माना जायेगा और जो अपने परिवार का भरण-पोषण कर सकता है, वह आर्थिक मामलों में बुद्धिमान माना जायेगा। यदि धर्म का पालन होगा तो वह मात्र यश पाने के लिए होगा और भगवान् की किसी अनिवार्य जानकारी के बिना सम्पन्न होगा।

एवं प्रजाभिर्दुष्टाभिराकीर्णे क्षितिमण्डले ।
ब्रह्मविट्क्षत्रशूद्राणां यो बली भविता नृपः ॥ ७॥

शब्दार्थ

एवम्—इस तरह से; प्रजाभिः—जनता से; दुष्टाभिः—भ्रष्ट की हुई; आकीर्णे—एकत्र हुई; क्षिति-मण्डले—पृथ्वीमण्डल पर; ब्रह्म—ब्राह्मणों; विट्—वैश्यगण; क्षत्र—क्षत्रिय; शूद्राणाम्—तथा शूद्रों के बीच; यः—जो भी; बली—सबसे बलवान; भविता—होगा; नृपः—राजा।

इस तरह ज्यों-ज्यों पृथ्वी भ्रष्ट जनता से भरती जायेगी, त्यों-त्यों समस्त वर्णों में से जो अपने को सबसे बलवान दिखला सकेगा वह राजनैतिक शक्ति प्राप्त करेगा।

प्रजा हि लुब्धै राजन्यैर्निर्घृणैर्दस्युधर्मभिः ।
आच्छिन्नदारद्रविणा यास्यन्ति गिरिकाननम् ॥ ८॥

शब्दार्थ

प्रजाः—नागरिक; हि—निस्सन्देह; लुब्धैः—लालची; राजन्यैः—राजसी वर्ग के द्वारा; निर्घृणैः—निर्दय; दस्यु—सामान्य चोरों के; धर्मभिः—स्वभाव के अनुसार कर्म करते हुए; आच्छिन्न—हर लिए गये; दार—पत्नी; द्रविणाः—तथा सम्पत्ति; यास्यन्ति—जायेंगे; गिरि—पर्वत; काननम्—तथा जंगल में।

जनता ऐसे लोभी तथा निष्ठुर शासकों द्वारा, जिनका आचरण सामान्य चोरों जैसा होगा, अपनी पत्नियाँ तथा सम्पत्ति छीन लिये जाने पर, पर्वतों तथा जंगलों में भाग जायेगी।

शाकमूलामिषक्षौद्रफलपुष्पाष्टिभोजनाः ।
अनावृष्ट्या विनङ्क्ष्यन्ति दुर्भिक्षकरपीडिताः ॥ ९ ॥

शब्दार्थ

शाक—पत्तियाँ; मूल—जड़ें; आमिष—मांस; क्षौद्र—जंगली शहद; फल—फल; पुष्प—फूल; अष्टि—तथा बीज; भोजनाः—खाकर; अनावृष्ट्या—सूखे के कारण; विनङ्क्ष्यन्ति—विनष्ट हो जायेंगे; दुर्भिक्ष—अकाल; कर—तथा टैक्स द्वारा; पीडिताः—पीड़ित।

अकाल तथा अत्यधिक कर से सताये हुए लोग पत्तियाँ, जड़ें, मांस, जंगली शहद, फल, फूल तथा बीज खाने के लिए बाध्य होंगे। सूखे से पीड़ित होकर वे पूर्णतया विनष्ट हो जायेंगे।

तात्पर्य : *श्रीमद्भागवत* में हमारे ग्रह (लोक) के भविष्य का प्रामाणिक वर्णन हुआ है। जिस तरह वृक्ष से विलग पत्ती सूख जाती है और विनष्ट हो जाती है उसी तरह जब मानव समाज का सम्बन्ध भगवान् से टूट जाता है, तो हिंसा तथा अव्यवस्था के कारण वह म्लान होकर बिखर जाता है। कम्प्यूटर तथा प्रक्षेपास्त्र होने पर भी यदि भगवान् वर्षा नहीं करें तो हम भूखों मर जायेंगे।

शीतवातातपप्रावृड्हिमैरन्योन्यतः प्रजाः ।
क्षुत्तृड्भ्यां व्याधिभिश्चैव सन्तप्स्यन्ते च चिन्तया ॥ १० ॥

शब्दार्थ

शीत—जाड़ा; वात—हवा; आतप—तपन; प्रावृट्—मूसलाधार वर्षा; हिमैः—तथा बर्फ से; अन्योन्यतः—लड़ने-झगड़ने से; प्रजाः—नागरिक; क्षुत्—भूख; तृड्भ्याम्—तथा प्यास से; व्याधिभिः—रोगों से; च—भी; एव—निस्सन्देह; सन्तप्स्यन्ते—उन्हें महान् कष्ट भोगना होगा; च—तथा; चिन्तया—चिन्ता से।

जनता को शीत, वात, तपन, वर्षा तथा हिम से अत्यधिक कष्ट उठाना पड़ेगा। लोग आपसी झगड़ों, भूख, प्यास, रोग तथा अत्यधिक चिन्ता से भी पीड़ित होते रहेंगे।

त्रिंशद्विंशति वर्षाणि परमायुः कलौ नृणाम् ॥ ११ ॥

शब्दार्थ

त्रिंशत्—तीस; विंशति—बीस और; वर्षाणि—वर्ष; परम-आयुः—अधिकतम आयु; कलौ—कलियुग में; नृणाम्—मनुष्यों की।

कलियुग में मनुष्यों की अधिकतम आयु पचास वर्ष हो जायेगी।

क्षीयमाणेषु देहेषु देहिनां कलिदोषतः ।
वर्णाश्रमवतां धर्मे नष्टे वेदपथे नृणाम् ॥ १२ ॥
पाषण्डप्रचुरे धर्मे दस्युप्रायेषु राजसु ।
चौर्यानृतवृथाहिंसानानावृत्तिषु वै नृषु ॥ १३ ॥
शूद्रप्रायेषु वर्णेषु च्छागप्रायासु धेनुषु ।

गृहप्रायेष्वाश्रमेषु यौनप्रायेषु बन्धुषु ॥ १४॥
अणुप्रायास्वोषधीषु शमीप्रायेषु स्थास्नुषु ।
विद्युत्प्रायेषु मेघेषु शून्यप्रायेषु सद्मसु ॥ १५॥
इत्थं कलौ गतप्राये जनेषु खरधर्मिषु ।
धर्मत्राणाय सत्त्वेन भगवानवतरिष्यति ॥ १६॥

शब्दार्थ

क्षीयमाणेषु—छोटा होकर; देहेषु—शरीर में; देहिनाम्—सारे जीवों के; कलि-दोषतः—कलियुग के दूषण से; वर्ण-आश्रम-वताम्—वर्णाश्रम समाज के सदस्यों के; धर्मे—उनके धर्मों के; नष्टे—नष्ट हो जाने पर; वेद-पथे—वेदों के मार्ग पर; नृणाम्—सारे मनुष्यों के लिए; पाषण्ड-प्रचुरे—प्रायः नास्तिकता; धर्मे—धर्म में; दस्यु-प्रायेषु—प्रायः चोर; राजसु—राजा; चौर्य—लूट; अनृत—झूठ बोलना; वृथा-हिंसा—व्यर्थ की हत्या; नाना—विविध; वृत्तिषु—पेशों में; वै—निस्सन्देह; नृषु—मनुष्यों में; शूद्र-प्रायेषु—प्रायः निम्न वर्ग के शूद्र; वर्णेषु—तथाकथित वर्णों में; छाग-प्रायासु—बकरियों जैसी; धेनुषु—गौवें; गृह-प्रायेषु—घरों जैसे; आश्रमेषु—आध्यात्मिक कुटिया; यौन-प्रायेषु—विवाह से आगे तक न पहुँचने वाले; बन्धुषु—पारिवारिक बन्धन; अणु-प्रायासु—अत्यन्त लघु; ओषधीषु—जड़ी-बूटियों में; शमी-प्रायेषु—शमी वृक्षों की तरह; स्थास्नुषु—सारे वृक्षों में; विद्युत्-प्रायेषु—सदैव बिजली प्रकट करते हुए; मेघेषु—बादलों में; शून्य-प्रायेषु—धार्मिक जीवन से शून्य; सद्मसु—घरों में; इत्थम्—इस प्रकार; कलौ—कलियुग में; गत-प्राये—प्रायः समाप्त हुए; जनेषु—लोगों में; खर-धर्मिषु—गधों जैसे गुणों वाले; धर्म-त्राणाय—धर्म के उद्धार हेतु; सत्त्वेन—सतोगुण में; भगवान्—भगवान्; अवतरिष्यति—अवतरित होगा।

कलियुग समाप्त होने तक सभी प्राणियों के शरीर आकार में अत्यन्त छोटे हो जायेंगे और वर्णाश्रम मानने वालों के धार्मिक सिद्धान्त विनष्ट हो जायेंगे। मानव समाज वेदपथ को पूरी तरह भूल जायेगा और तथाकथित धर्म प्रायः नास्तिक होगा। राजे प्रायः चोर हो जायेंगे; लोगों का पेशा चोरी करना, झूठ बोलना तथा व्यर्थ हिंसा करना हो जायेगा और सारे सामाजिक वर्ण शूद्रों के स्तर तक नीचे गिर जायेंगे। गौवें बकरियों जैसी होंगी; आश्रम संसारी घरों से भिन्न नहीं होंगे तथा पारिवारिक सम्बन्ध तात्कालिक विवाह बंधन से आगे नहीं जायेंगे। अधिकांश वृक्ष तथा जड़ी-बूटियाँ छोटी होंगी और सारे वृक्ष बौने शमी वृक्षों जैसे प्रतीत होंगे। बादल बिजली से भरे होंगे; घर पवित्रता से रहित तथा सारे मनुष्य गधों जैसे हो जायेंगे। उस समय भगवान् पृथ्वी पर प्रकट होंगे। वे शुद्ध सतोगुण की शक्ति से कर्म करते हुए शाश्वत धर्म की रक्षा करेंगे।

तात्पर्य : इन लोकों में यह महत्त्वपूर्ण बात कही गई है कि इस युग में तथाकथित धर्म नास्तिक होंगे (*पाषण्डप्रचुरे धर्मे*)। *भागवत* की भविष्यवाणी की पुष्टि में हाल ही में संयुक्त राज्य के सर्वोच्च न्यायालय ने यह आदेश दिया है कि धर्म होने के लिए विश्वास की प्रणाली में किसी परम पुरुष को मान्यता देना आवश्यक नहीं है। यही नहीं, प्राच्य देशों से लाये गये अनेक नास्तिक, शून्यवादी विश्वास प्रणालियों ने आधुनिक नास्तिक वैज्ञानिकों का ध्यान आकृष्ट किया है, जो प्राच्य तथा पाश्चात्य शून्यवाद की समानताओं की स्थापना आकर्षक रहस्यमयी पुस्तकों में करते हैं।

इन श्लोकों में कलियुग के अनेक नीरस लक्षणों का स्पष्ट वर्णन हुआ है। अन्ततः इस युग के अन्त में, भगवान् कृष्ण कल्कि के रूप में अवतरित होंगे और पृथ्वी से पूर्णरूपेण आसुरी मनोवृत्ति

वाले लोगों का सफाया कर देंगे।

चराचरगुरोर्विष्णोरीश्वरस्याखिलात्मनः ।
धर्मत्राणाय साधूनां जन्म कर्मापनुत्तये ॥ १७॥

शब्दार्थ

चर-अचर—सारे जड़ तथा चेतन प्राणी; गुरोः—गुरु का; विष्णोः—विष्णु का; ईश्वरस्य—भगवान् का; अखिल—सारे; आत्मनः—परमात्मा का; धर्म-त्राणाय—धर्म की रक्षा के लिए; साधूनाम्—साधु पुरुषों के; जन्म—जन्म; कर्म—सकाम कर्म की; अपनुत्तये—समाप्ति के लिए।

भगवान् विष्णु जोकि सारे जड़ तथा चेतन प्राणियों के गुरु तथा सबों के परमात्मा हैं, धर्म की रक्षा करने तथा अपने सन्त भक्तों को भौतिक कर्मफल से छुटकारा दिलाने के लिए जन्म लेते हैं।

शम्भलग्राममुख्यस्य ब्राह्मणस्य महात्मनः ।
भवने विष्णुयशसः कल्किः प्रादुर्भविष्यति ॥ १८॥

शब्दार्थ

शम्भल-ग्राम—शम्भल नामक गाँव में; मुख्यस्य—प्रमुख नागरिक के; ब्राह्मणस्य—ब्राह्मण के; महा-आत्मनः—महान् आत्मा; भवने—घर में; विष्णुयशसः—विष्णुयशा के; कल्किः—भगवान् कल्कि; प्रादुर्भविष्यति—प्रकट होगा।

भगवान् कल्कि शम्भल ग्राम के अत्यन्त निपुण ब्राह्मण महात्मा विष्णुयशा के घर में प्रकट होंगे।

अश्वमाशुगमारुह्य देवदत्तं जगत्पतिः ।
असिनासाधुदमनमष्टैश्वर्यगुणान्वितः ॥ १९॥
विचरन्नाशुना क्षौण्यां हयेनाप्रतिमद्युतिः ।
नृपलिङ्गच्छदो दस्यून्कोटिशो निहनिष्यति ॥ २०॥

शब्दार्थ

अश्वम्—अपने घोड़े; आशु-गम्—तेज चलने वाले; आरुह्य—सवार होकर; देवदत्तम्—देवदत्त पर; जगत्-पतिः—ब्रह्माण्ड के स्वामी; असिना—अपनी तलवार से; असाधु-दमनम्—असाधुओं का दमन करने वाला (घोड़ा); अष्ट—आठ; ऐश्वर्य—योग ऐश्वर्यों; गुण—तथा भगवान् के दिव्य गुणों से; अन्वितः—युक्त; विचरन्—विचरण करते हुए; आशुना—तेज; क्षौण्याम्—पृथ्वी पर; हयेन—अपने घोड़े द्वारा; अप्रतिम—अद्वितीय; द्युतिः—तेज वाला; नृप-लिङ्ग—राजाओं के वेश में; छदः—अपने को भेस बदल कर रहते हुए; दस्यून्—चोरों को; कोटिशः—करोड़ों; निहनिष्यति—मार डालेगा।

ब्रह्माण्ड के स्वामी भगवान् कल्कि अपने तेज घोड़े देवदत्त पर सवार होंगे और हाथ में तलवार लेकर, ईश्वर के आठ योग ऐश्वर्यों तथा आठ विशिष्ट गुणों को प्रदर्शित करते हुए, पृथ्वी पर विचरण करेंगे। वे अपना अद्वितीय तेज प्रदर्शित करते हुए तथा तेज चाल से सवारी करते हुए, उन करोड़ों चोरों का वध करेंगे जो राजाओं के वेश में रहने का दुस्साहस कर रहे होंगे।

तात्पर्य : इन श्लोकों में भगवान् कल्कि की लोमहर्षक लीलाओं का वर्णन हुआ है। कोई भी व्यक्ति ऐसे शक्तिशाली सुन्दर व्यक्ति की ओर आकृष्ट हुए बिना नहीं रहेगा जो बिजली की चाल वाले अद्भुत घोड़े पर सवार होकर अपने हाथ में तलवार लेकर क्रूर आसुरी लोगों को दण्ड दे रहा हो और उनका विध्वंस कर रहा हो।

निस्सन्देह, उन्मादी भौतिकतावादी लोग यह तर्क कर सकते हैं कि भगवान् कल्कि का यह चित्र मानव मन की उपज है—पौराणिक देवता का चित्र है, जो उन लोगों द्वारा चित्रित किया गया है जिनका विश्वास किसी श्रेष्ठ व्यक्ति पर होता है। किन्तु यह तर्क युक्ति संगत नहीं है और न ही इसमें कोई दम है। यह कतिपय लोगों का मत है। हमें जल चाहिए किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि मनुष्य जल उत्पन्न करता है। हमें भोजन, आक्सीजन तथा अन्य बहुत-सी वस्तुओं की आवश्यकता होती है जिन्हें हम उत्पन्न नहीं करते। चूँकि हमारा सामान्य अनुभव यही है कि हमारी आवश्यकताएँ बाह्य जगत में विद्यमान प्राप्य वस्तुओं के अनुरूप हैं अतएव भगवान् की आवश्यकता से यह सूचित होता है कि भगवान् का अस्तित्व है। दूसरे शब्दों में, प्रकृति हमें उन वस्तुओं की आवश्यकता का ज्ञान कराती है, जो वास्तव में विद्यमान होती हैं और जिनकी आवश्यकता हमारे कल्याण के लिए होती है। इसी तरह हमें ईश्वर की आवश्यकता का अनुभव होता है क्योंकि हम ईश्वर के अंश हैं और उनके बिना रह नहीं सकते। कलियुग के अन्त में यही ईश्वर बलशाली कल्कि अवतार के रूप में प्रकट होगा और असुरों के दूषण का सफाया कर देगा।

अथ तेषां भविष्यन्ति मनांसि विशदानि वै ।
वासुदेवाङ्गरागातिपुण्यगन्धानिलस्पृशाम् ।
पौरजानपदानां वै हतेष्वखिलदस्युषु ॥ २१ ॥

शब्दार्थ

अथ—तब; तेषाम्—उनमें से; भविष्यन्ति—होंगे; मनांसि—मन; विशदानि—स्पष्ट; वै—निस्सन्देह; वासुदेव—भगवान् वासुदेव के; अङ्ग—शरीर का; राग—सुगन्धि पदार्थों से; अति-पुण्य—अत्यन्त पवित्र; गन्ध—गन्ध से युक्त; अनिल—वायु द्वारा; स्पृशाम्—स्पर्श किये हुओं का; पौर—नगरवासियों के; जन-पदानाम्—छोटे कस्बों तथा गाँवों के निवासियों के; वै—निस्सन्देह; हतेषु—मारे जाने पर; अखिल—सारे; दस्युषु—धूर्त राजाओं के।

जब सारे धूर्त राजा मारे जा चुकेंगे, तो शहरों तथा कस्बों के निवासी, भगवान् वासुदेव को लेपित चन्दन तथा अन्य प्रसाधनों की सुगन्धि को लाती हुई पवित्र वायु का अनुभव करेंगे और उससे उनके मन आध्यात्मिक रूप से शुद्ध हो जायेंगे।

तात्पर्य : ऐसे महान् वीर द्वारा नाटकीय ढंग से बचाया जाना जो भगवान् हो, एक दिव्य अनुभव होगा। कलियुग के अन्त में असुरों की मृत्यु के साथ ही सुगन्धित वायु चलेगी जिससे वातावरण अत्यन्त मनमोहक हो जायेगा।

तेषां प्रजाविसर्गश्च स्थविष्ठः सम्भविष्यति ।

वासुदेवे भगवति सत्त्वमूर्तौ हृदि स्थिते ॥ २२ ॥

शब्दार्थ

तेषाम्—उनकी; प्रजा—सन्तान की; विसर्गः—उत्पत्ति; च—तथा; स्थविष्ठः—प्रचुर; सम्भविष्यति—होगा; वासुदेवे—वासुदेव में; भगवति—भगवान्; सत्त्व-मूर्तौ—सतोगुणी स्वरूप में; हृदि—हृदयों में; स्थिते—स्थित।

जब भगवान् वासुदेव बचे हुए नागरिकों के हृदयों में अपने दिव्य सात्विक रूप में प्रकट होते हैं, वे फिर से पृथ्वी की जनसंख्या को काफी बढ़ा देंगे।

यदावतीर्णो भगवान्कल्किर्धर्मपतिर्हरिः ।
कृतं भविष्यति तदा प्रजासूतिश्च सात्त्विकी ॥ २३ ॥

शब्दार्थ

यदा—जब; अवतीर्णः—अवतरित; भगवान्—भगवान्; कल्किः—कल्कि; धर्म-पतिः—धर्म के स्वामी; हरिः—भगवान्; कृतम्—सत्ययुग; भविष्यति—शुरू होगा; तदा—तब; प्रजा-सूतिः—प्रजा की उत्पत्ति; च—तथा; सात्त्विकी—सतोगुणी।

जब पृथ्वी पर धर्म के पालनहारे भगवान्, कल्कि के रूप में, प्रकट हो चुकेंगे, तो सत्ययुग प्रारम्भ होगा और मानव समाज सात्विक सन्तानें उत्पन्न करेगा।

यदा चन्द्रश्च सूर्यश्च तथा तिष्यबृहस्पती ।
एकराशौ समेष्यन्ति भविष्यति तदा कृतम् ॥ २४ ॥

शब्दार्थ

यदा—जब; चन्द्रः—चन्द्रमा; च—तथा; सूर्यः—सूर्य; च—तथा; तथा—भी; तिष्य—तिष्य या पुष्य नक्षत्र (जो ३० २०' से लेकर १६० ४०' कर्क तक विस्तीर्ण है); बृहस्पती—बृहस्पति नक्षत्र; एक-राशौ—एक ही राशि पर (कर्कट); समेष्यन्ति—एकसाथ प्रवेश करेंगे; भविष्यति—होगा; तदा—तब; कृतम्—सत्ययुग।

जब चन्द्रमा, सूर्य तथा बृहस्पति एकसाथ कर्कट राशि में होते हैं और तीनों एक ही समय पुष्य नक्षत्र में प्रवेश करते हैं, ठीक उसी क्षण सत्य या कृतयुग प्रारम्भ होगा।

येऽतीता वर्तमाना ये भविष्यन्ति च पार्थिवाः ।
ते त उद्देशतः प्रोक्ता वंशीयाः सोमसूर्ययोः ॥ २५ ॥

शब्दार्थ

ये—जो; अतीताः—विगत; वर्तमानाः—वर्तमान; ये—जो; भविष्यन्ति—भविष्य में होंगे; च—तथा; पार्थिवाः—पृथ्वी के राजे; ते ते—वे वे, वे सभी; उद्देशतः—संक्षिप्त कथन द्वारा; प्रोक्ताः—वर्णित; वंशीयाः—वंशों के सदस्य; सोम-सूर्ययोः—चन्द्र तथा सूर्य देव के।

इस तरह मैंने सूर्य तथा चन्द्र वंशों—भूत, वर्तमान तथा भविष्य—के सारे राजाओं का वर्णन कर दिया है।

आरभ्य भवतो जन्म यावन्नन्दाभिषेचनम् ।

एतद्वर्षसहस्रं तु शतं पञ्चदशोत्तरम् ॥ २६ ॥

शब्दार्थ

आरभ्य—प्रारम्भ करके; भवतः—आपके (परीक्षित); जन्म—जन्म; यावत्—जब तक; नन्द—महानन्दि के पुत्र राजा नन्द का; अभिषेचनम्—अभिषेक, राजतिलक; एतत्—यह; वर्ष—वर्ष; सहस्रम्—एक हजार; तु—तथा; शतम्—एक सौ; पञ्च-दश-उत्तरम्—पचास और।

तुम्हारे जन्म से लेकर राजा नन्द के राजतिलक तक ११५० वर्ष बीत चुकेंगे।

तात्पर्य : यद्यपि शुकदेव गोस्वामी, इसके पूर्व, राजवंशों के लगभग १,५०० वर्षों का वर्णन कर चुके हैं, किन्तु ऐसा समझा जाता है कि कुछ राजाओं के बीच के समय में अति व्याप्ति हुई है। इसलिए इस तिथिक्रम को प्रामाणिक मान लेना चाहिए।

सप्तर्षीणां तु यौ पूर्वौ दृश्येते उदितौ दिवि ।
तयोस्तु मध्ये नक्षत्रं दृश्यते यत्समं निशि ॥ २७॥
तेनैव ऋषयो युक्तास्तिष्ठन्त्यब्दशतं नृणाम् ।
ते त्वदीये द्विजाः काल अधुना चाश्रिता मघाः ॥ २८ ॥

शब्दार्थ

सप्त-ऋषीणाम्—सात ऋषियों का समूह (पाश्चात्य लोग जिसे उर्स मेजर कहते हैं); तु—तथा; यौ—जो दो नक्षत्र; पूर्वौ—प्रथम; दृश्येते—देखे जाते हैं; उदितौ—उदय हुए; दिवि—आकाश में; तयोः—दोनों (पुलह तथा क्रतु) के; तु—तथा; मध्ये—बीच में; नक्षत्रम्—नक्षत्र; दृश्यते—देखा जाता है; यत्—जो; समम्—उसी रेखा में; निशि—रात्रि के आकाश में; तेन—उस नक्षत्र से; एव—निस्सन्देह; ऋषयः—सप्तर्षिगण; युक्ताः—सम्बद्ध हैं; तिष्ठन्ति—रहते जाते हैं; अब्द-शतम्—एक सौ वर्ष; नृणाम्—मनुष्यों का; ते—ये सप्तर्षि; त्वदीये—आप में; द्विजाः—कुलीन ब्राह्मण; काले—समय में; अधुना—वर्तमान; च—तथा; आश्रिताः—स्थित हैं; मघाः—मघा नक्षत्र में।

सप्तर्षि मण्डल के सात तारों में से पुलह तथा क्रतु ही सबसे पहले रात्रिकालीन आकाश में उदय होते हैं। यदि उनके मध्य बिन्दु से होकर उत्तर दक्षिण को एक रेखा खींची जाय तो यह जिस नक्षत्र से होकर गुजरती है, वह उस काल का प्रधान नक्षत्र माना जाता है। सप्तर्षिगण एक सौ मानवी वर्षों तक उस विशेष नक्षत्र से जुड़े रहते हैं। सम्प्रति तुम्हारे जीवन-काल में वे मघा नक्षत्र में स्थित हैं।

विष्णोर्भगवतो भानुः कृष्णाख्योऽसौ दिवं गतः ।
तदाविशत्कलिर्लोकं पापे यद्रमते जनः ॥ २९ ॥

शब्दार्थ

विष्णोः—विष्णु के; भगवतः—भगवान्; भानुः—सूर्य; कृष्ण-आख्यः—कृष्ण नामक; असौ—वह; दिवम्—आध्यात्मिक आकाश तक; गतः—वापस जाकर; तदा—तब; अविशत्—प्रवेश किया; कलिः—कलियुग; लोकम्—इस जगत में; पापे—पाप में; यत्—जिस युग में; रमते—रमण करते हैं; जनः—लोग।

भगवान् विष्णु सूर्य के समान तेजवान् हैं और कृष्ण कहलाते हैं। जब वे वैकुण्ठ-लोक वापस चले गये, तो इस जगत में कलि ने प्रवेश किया और तब लोग पापकर्मों में आनन्द

लेने लगे।

यावत्स पादपद्माभ्यां स्पृशनास्ते रमापतिः ।
तावत्कलिर्वै पृथिवीं पराक्रन्तुं न चाशकत् ॥ ३० ॥

शब्दार्थ

यावत्—जब तक; सः—वह, श्रीकृष्ण; पाद-पद्माभ्याम्—अपने चरणकमलों से; स्पृशन्—स्पर्श करते हुए; आस्ते—रहता रहा; रमा-पतिः—लक्ष्मी देवी का पति; तावत्—तब तक; कलिः—कलियुग; वै—निस्सन्देह; पृथिवीम्—पृथ्वी को; पराक्रन्तुम्—जीतने के लिए; न—नहीं; च—तथा; अशकत्—समर्थ था।

जब तक लक्ष्मीपति भगवान् श्रीकृष्ण अपने चरणकमलों से पृथ्वी का स्पर्श करते रहे, तब तक कलि इस लोक का दमन करने में असमर्थ रहा।

तात्पर्य : यद्यपि भगवान् कृष्ण के समय में ही दुर्योधन तथा उनके सहयोगियों के कुकृत्यों के कारण कलि कुछ हद तक पृथ्वी में प्रवेश कर चुका था, किन्तु भगवान् कृष्ण लगातार कलि के प्रभाव को दबाते रहे। भगवान् कृष्ण द्वारा इस धराधाम का त्याग करने तक कलियुग सम्पन्न नहीं बन सका।

यदा देवर्षयः सप्त मघासु विचरन्ति हि ।
तदा प्रवृत्तस्तु कलिर्द्वादशाब्दशतात्मकः ॥ ३१ ॥

शब्दार्थ

यदा—जब; देव-ऋषयः सप्त—देवताओं में से सात ऋषि; मघासु—मघा नक्षत्र में; विचरन्ति—विचरण करते हैं; हि—निस्सन्देह; तदा—तब; प्रवृत्तः—प्रारम्भ होता है; तु—तथा; कलिः—कलियुग; द्वादश—बारह; अब्द-शत—शताब्दी (देवताओं के ये १,२०० वर्ष बराबर हैं पृथ्वी पर ४,३२,००० वर्ष के); आत्मकः—से युक्त।

जब सप्तर्षि मण्डल मघा नक्षत्र से होकर गुजरता है, तो कलियुग प्रारम्भ होता है। यह देवताओं के १,२०० वर्षों तक रहता है।

यदा मघाभ्यो यास्यन्ति पूर्वाषाढां महर्षयः ।
तदा नन्दात्प्रभृत्येष कलिर्वृद्धिं गमिष्यति ॥ ३२ ॥

शब्दार्थ

यदा—जब; मघाभ्यः—मघा से; यास्यन्ति—वे जायेंगे; पूर्व-आषाढाम्—अगला नक्षत्र पूर्वाषाढा; महा-ऋषयः—सप्तर्षि; तदा—तब; नन्दात्—नन्द से लेकर; प्रभृति—तथा उसके वंशज; एषः—यह; कलिः—कलियुग; वृद्धिम्—प्रौढ़ता; गमिष्यति—प्राप्त करेगा।

जब सप्तर्षि मघा से चल कर पूर्वाषाढा में जायेंगे तो कलि अपनी पूर्ण शक्ति में होगा और राजा नन्द तथा उसके वंश से इसका सूत्रपात होगा।

यस्मिन्कृष्णो दिवं यातस्तस्मिन्नेव तदाहनि ।
प्रतिपन्नं कलियुगमिति प्राहुः पुराविदः ॥ ३३ ॥

शब्दार्थ

यस्मिन्—जिस पर; कृष्णः—श्रीकृष्ण; दिवम्—वैकुण्ठ को; यातः—गये हुए; तस्मिन्—उस पर; एव—वही; तदा—तब; अहनि—दिन; प्रतिपन्नम्—प्राप्त किया हुआ; कलि-युगम्—कलियुग; इति—इस प्रकार; प्राहुः—कहते हैं; पुरा—भूतकाल के; विदः—जानकार।

जो लोग भूतकाल को अच्छी तरह समझते हैं, वे यह कहते हैं कि जिस दिन भगवान् कृष्ण ने वैकुण्ठ-लोक के लिए प्रस्थान किया, उसी दिन से कलियुग का प्रभाव शुरू हो गया।

तात्पर्य : यद्यपि वैधानिक दृष्टि से कलियुग को इस पृथ्वी पर भगवान् कृष्ण के रहते हुए शुरू हो जाना था, किन्तु इस पतित युग को भगवान् के प्रस्थान तक प्रतीक्षा करनी पड़ी।

दिव्याब्दानां सहस्रान्ते चतुर्थे तु पुनः कृतम् ।
भविष्यति तदा नृणां मन आत्मप्रकाशकम् ॥ ३४॥

शब्दार्थ

दिव्य—देवताओं के; अब्दानाम्—वर्ष; सहस्र—एक हजार; अन्ते—अन्त में; चतुर्थे—चतुर्थ युग, कलियुग में; तु—तथा; पुनः—फिर; कृतम्—सत्ययुग; भविष्यति—होगा; तदा—तब; नृणाम्—मनुष्यों के; मनः—मन; आत्म-प्रकाशकम्—स्वयं प्रकाशित।

कलियुग के एक हजार दैवी वर्षों के बाद, सत्ययुग पुनः प्रकट होगा। उस समय सारे मनुष्यों के मन स्वयं प्रकाशमान् हो उठेंगे।

इत्येष मानवो वंशो यथा सङ्ख्यायते भुवि ।
तथा विट्शूद्रविप्राणां तास्ता ज्ञेया युगे युगे ॥ ३५॥

शब्दार्थ

इति—इस प्रकार (श्रीमद्भागवत के स्कन्धों में); एषः—यह; मानवः—वैवस्वत मनु से अवतरित; वंशः—वंश; यथा—जिस तरह; सङ्ख्यायते—गिनाया जाता है; भुवि—पृथ्वी पर; तथा—उस प्रकार से; विट्—वैश्यों; शूद्र—शूद्रों; विप्राणाम्—तथा ब्राह्मणों के; ताः ताः—वे वे; ज्ञेयाः—जाने जाने चाहिए; युगे युगे—प्रत्येक युग में।

इस प्रकार मैंने मनु के राजवंश का वर्णन, जिस रूप में वह पृथ्वी पर विख्यात है, कह सुनाया। इसी प्रकार से विविध युगों में रहने वाले वैश्यों, शूद्रों तथा ब्राह्मणों के इतिहास का अध्ययन किया जा सकता है।

तात्पर्य : जिस तरह राजाओं के वंश में उच्च तथा निम्न, प्रतापी तथा दुष्ट राजा सम्मिलित रहते हैं उसी तरह समाज के बुद्धिजीवी, व्यापारी तथा श्रमिक वर्णों में भी अनेक प्रकार के लोग पाये जाते हैं।

एतेषां नामलिङ्गानां पुरुषाणां महात्मनाम् ।
कथामात्रावशिष्टानां कीर्तिरेव स्थिता भुवि ॥ ३६॥

शब्दार्थ

एतेषाम्—इनके; नाम—नामों; लिङ्गानाम्—उन्हें स्मरण रखने के साधन मात्र हैं, जो; पुरुषाणाम्—पुरुषों के; महा-आत्मनाम्—महात्माओं के; कथा—कहानियाँ; मात्र—केवल; अवशिष्टानाम्—जिनके शेषांश; कीर्तिः—यश; एव—केवल; स्थिता—उपस्थित हैं; भुवि—पृथ्वी पर।

ये पुरुष जोकि महात्मा थे अब केवल अपने नामों से जाने जाते हैं। वे भूतकाल के विवरणों में ही पाये जाते हैं और पृथ्वी पर केवल उनका यश रहता है।

तात्पर्य : कोई अपने को महान् शक्तिशाली नेता क्यों न माने, अन्ततोगत्वा उसका नाम केवल नामों की लम्बी सूची में रह जाता है। दूसरे शब्दों में, भौतिक जगत में शक्ति तथा पद से चिपके रहना व्यर्थ है।

देवापिः शान्तनोर्भ्राता मरुश्चेक्ष्वाकुवंशजः ।
कलापग्राम आसाते महायोगबलान्वितौ ॥ ३७॥

शब्दार्थ

देवापिः—देवापि; शान्तनोः—महाराज शान्तनु का; भ्राता—भाई; मरुः—मरु; च—तथा; इक्ष्वाकु-वंश-जः—इक्ष्वाकु वंश में उत्पन्न; कलाप-ग्रामे—कलाप ग्राम में; आसाते—रह रहे हैं; महा—महान्; योग-बल—योगशक्ति से; अन्वितौ—युक्त।

महाराज शान्तनु का भाई देवापि तथा इक्ष्वाकु वंशी मरु, दोनों ही महान् योगशक्ति से युक्त हैं और अब भी कलाप ग्राम में रह रहे हैं।

ताविहैत्य कलेरन्ते वासुदेवानुशिक्षितौ ।
वर्णाश्रमयुतं धर्मं पूर्ववत्प्रथयिष्यतः ॥ ३८॥

शब्दार्थ

तौ—वे दोनों (मरु तथा देवापि); इह—मानव समाज में; एत्य—लौट कर; कलेः—कलियुग के; अन्ते—अन्त में; वासुदेव—भगवान् वासुदेव द्वारा; अनुशिक्षितौ—आदेश दिया जाकर; वर्ण-आश्रम—वर्ण तथा आश्रम से; युतम्—युक्त; धर्मम्—नित्य धर्म-संहिता; पूर्व-वत्—पहले की ही तरह; प्रथयिष्यतः—लागू करेंगे।

कलियुग के अन्त में, ये दोनों ही राजा भगवान् वासुदेव का आदेश पाकर, मानव समाज में लौट आयेंगे और मनुष्य के शाश्वत धर्म की पुनः स्थापना करेंगे जिसमें वर्ण तथा आश्रम का विभाजन पूर्ववत् रहेगा।

तात्पर्य : इस तथा पिछले श्लोक के अनुसार, कलियुग के अन्त होने के बाद, मानव संस्कृति की पुनर्स्थापना करने वाले दो महान् राजा पहले ही पृथ्वी पर अवतरित हो चुके हैं जहाँ वे भगवान् विष्णु की भक्ति करने के लिए धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा कर रहे हैं।

कृतं त्रेता द्वापरं च कलिश्चेति चतुर्युगम् ।
अनेन क्रमयोगेन भुवि प्राणिषु वर्तते ॥ ३९॥

शब्दार्थ

कृतम्—सत्ययुग; त्रेता—त्रेतायुग; द्वापरम्—द्वापर युग; च—तथा; कलिः—कलियुग; च—तथा; इति—इस प्रकार; चतुः-युगम्—चार युगों का चक्र; अनेन—इससे; क्रम—क्रमवार; योगेन—व्यवस्था; भुवि—पृथ्वी पर; प्राणिषु—जीवों के बीच; वर्तते—लगातार चल रही है।

इस पृथ्वी पर जीवों के बीच चार युगों का—सत्य, त्रेता, द्वापर तथा कलियुग का—चक्र निरन्तर चलता रहता है, जिससे घटनाओं का वही सामान्य अनुक्रम पिष्टपेषित होता है।

राजन्नेते मया प्रोक्ता नरदेवास्तथापरे ।
भूमौ ममत्वं कृत्वान्ते हित्वेमां निधनं गताः ॥ ४० ॥

शब्दार्थ

राजन्—हे राजा परीक्षित; एते—ये; मया—मेरे द्वारा; प्रोक्ताः—वर्णित; नर-देवाः—राजा; तथा—और; अपरे—अन्य मनुष्य; भूमौ—पृथ्वी पर; ममत्वम्—आत्मीयता; कृत्वा—दिखाते हुए; अन्ते—अन्तमें; हित्वा—त्याग कर; इमाम्—यह जगत; निधनम्—विनाश को; गताः—प्राप्त हुए।

हे राजा परीक्षित, मेरे द्वारा वर्णित ये सारे राजे तथा अन्य सारे मनुष्य इस पृथ्वी पर आते हैं, अपना प्रभुत्व जताते हैं किन्तु अन्त में उन्हें यह जगत त्यागना पड़ता है और वे विनाश को प्राप्त होते हैं।

कृमिविड्भस्मसंज्ञान्ते राजनाम्नोऽपि यस्य च ।
भूतध्रुक्तत्कृते स्वार्थं किं वेद निरयो यतः ॥ ४१ ॥

शब्दार्थ

कृमि—कीड़ों का; विट्—मल; भस्म—तथा राख; संज्ञा—उपाधि; अन्ते—अन्त में; राज-नाम्नः—राजा नाम से विख्यात; अपि—यद्यपि; यस्य—जिस (शरीर) का; च—तथा; भूत—जीवों का; ध्रुक्—शत्रु; तत्-कृते—उस शरीर के लिए; स्व-अर्थम्—अपने हित को; किम्—क्या; वेद—जानता है; निरयः—नरक में दण्ड; यतः—जिसके कारण।

भले ही अभी मनुष्य का शरीर राजा की उपाधि से युक्त हो, किन्तु अन्त में इसका नाम कीड़े, मल या राख हो जायेगा। जो व्यक्ति अपने शरीर के लिए अन्य जीवों को पीड़ा पहुँचाता है, वह अपने हित के विषय में क्या जान सकता है क्योंकि उसके कार्य उसे नरक की ओर ले जाने वाले होते हैं?

तात्पर्य : मृत्यु के बाद शरीर को दफना दिया जाता है और कीड़े उसे खा जाते हैं या फिर उसे सड़क पर या जंगल में फेंक दिया जाता है, जिससे पशु उसे खाकर शेष भाग को मल रूप में निकाल दें या फिर उसे जलाकर भस्म कर दिया जाता है। इसलिए अन्य जीवों के शरीरों को चोट पहुँचाने के लिए अपने नश्वर शरीर का उपयोग करके मनुष्य को नरक का मार्ग प्रशस्त नहीं करना चाहिए। इस श्लोक में *भूत* शब्द में वे अमानुषी जीव भी सम्मिलित हैं, जिन्हें ईश्वर ने ही बनाया है। मनुष्य को ईर्ष्यापूर्ण हिंसा त्याग कर कृष्णभावनामृत की विधि से हर वस्तु में ईश्वर का दर्शन करना सीखना चाहिए।

कथं सेयमखण्डा भूः पूर्वैर्मे पुरुषैर्धृता ।

मत्पुत्रस्य च पौत्रस्य मत्पूर्वा वंशजस्य वा ॥ ४२ ॥

शब्दार्थ

कथम्—कैसे; सा इयम्—यह वही; अखण्डा—असीम; भूः—पृथ्वी; पूर्वैः—पूर्वजों द्वारा; मे—मेरे; पुरुषैः—पुरुषों द्वारा; धृता—वश में की गई; मत्-पुत्रस्य—मेरे पुत्र के; च—तथा; पौत्रस्य—पौत्र के; मत्-पूर्वा—अब मेरे अधीन; वंश-जस्य—वंशजों के; वा—अथवा।

[भौतिकतावादी राजा सोचता हैं] ''यह असीम पृथ्वी मेरे पूर्वजों के अधीन थी और अब मेरी प्रभुसत्ता में है। मैं इसे अपने पुत्रों, पौत्रों तथा अन्य वंशजों के हाथों में रहते जाने की किस तरह व्यवस्था करूँ?''

तात्पर्य : यह मूर्खतापूर्ण स्वामित्व का उदाहरण है।

तेजोऽबन्नमयं कायं गृहीत्वात्मतयाबुधाः ।
महीं ममतया चोभौ हित्वान्तेऽदर्शनं गताः ॥ ४३ ॥

शब्दार्थ

तेजः—अग्नि; अप्—जल; अन्न—तथा पृथ्वी; मयम्—से बना; कायम्—यह शरीर; गृहीत्वा—स्वीकार करके; आत्मतया—''मैं'' भाव से; अबुधाः—मूर्ख; महीम्—इस पृथ्वी को; ममतया—''मेरे'' भाव से; च—तथा; उभौ—दोनों; हित्वा—त्याग कर; अन्ते—अन्ततः; अदर्शनम्—अन्तर्धान; गताः—हो गये।

यद्यपि मूर्ख लोग पृथ्वी, जल तथा अग्नि से बने शरीर को ''मैं'' और इस पृथ्वी को ''मेरी'' स्वीकार करते हैं, किन्तु अन्ततः उन सबों को अपना शरीर तथा पृथ्वी दोनों त्यागना पड़ा और वे विस्मृति के गर्भ में चले गये।

तात्पर्य : यद्यपि आत्मा शाश्वत है, हमारी तथाकथित पारिवारिक परंपरा तथा पार्थिव यश निश्चित रूप से विस्मृत हो जायेंगे।

ये ये भूपतयो राजन्भुञ्जते भुवमोजसा ।
कालेन ते कृताः सर्वे कथामात्राः कथासु च ॥ ४४॥

शब्दार्थ

ये ये—जो भी; भू-पतयः—राजा; राजन्—हे राजा परीक्षित; भुञ्जते—भोग करते हैं; भुवम्—संसार का; ओजसा—अपने पराक्रम से; कालेन—काल की शक्ति से; ते—वे; कृताः—बनाये गये; सर्वे—सभी; कथा-मात्राः—मात्र वृत्तान्त; कथासु—विविध इतिहासों में; च—तथा।

हे राजा परीक्षित, ये सारे राजे जिन्होंने अपने बल से पृथ्वी का भोग करना चाहा, सारे के सारे, काल की शक्ति से ऐतिहासिक वृत्तान्त मात्र बन कर रह गये।

तात्पर्य : इस श्लोक में *राजन्* शब्द महत्त्वपूर्ण है। परीक्षित महाराज अपना शरीर त्याग कर भगवद्धाम जाने की तैयारी कर रहे थे और उनके परम दयालु गुरु शुकदेव गोस्वामी ने उनकी रही सही आसक्ति को जो राजा होने के कारण शेष थी, इस पद की अन्ततोगत्वा नगण्यता बताकर, ध्वस्त कर दिया। गुरु की अहैतुकी कृपा से कोई भी व्यक्ति भगवद्धाम जाने के लिए तैयार किया जा सकता है। गुरु उसे भौतिक माया पर अपनी मजबूत पकड़ को ढीला करने और माया के राज्य

को पीछे छोड़ने की शिक्षा देता है। यद्यपि शुकदेव गोस्वामी भौतिक जगत की तथाकथित कीर्ति के विषय में इस अध्याय में बड़ी रुखाई से बोलते हैं, वे उस गुरु की अहैतुकी कृपा दिखा रहे हैं, जो अपने शरणागत शिष्य को भगवद्धाम या वैकुण्ठ ले जाते हैं।

इस प्रकार श्रीमद्भागवत के बारहवें स्कंध के अन्तर्गत ''कलियुग के लक्षण'' नामक द्वितीय अध्याय के श्रील भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद के विनीत सेवकों द्वारा रचित तात्पर्य पूर्ण हुए।